आठवां अध्याय

पश्चिमी भारतीय क्षत्रप नरेशों के सिक्के

ईसवी सन् के आरम्भ से कुषाण-साम्राज्य कई भागों में बँटा हुआ था। प्रांतीय शासकों की उपाधि क्षत्रप थी, किन्तु शासक शकवंशी नरेश थे जो बाहर से आकर भारत में शासन करने लगे। ईसा-पूर्व गान्धार तथा काबुल में यूनानी लोगों का शासन था। उन्हें अपदस्थ करके शकों ने अपना राज्य स्थापित किया। ईरानी भूभाग पार्थिया में रहने के कारण इन्हें पार्थियन शक भी कहते थे। यूईची यानी कुषाण इनके परवर्ती शासकों के नाम सर्वविदित हैं। राजा कनिष्क उस वंश का सबसे प्रतापी नरेश हुआ जिसने भारतीय संस्कृति को अपनाया। कुषाण साम्राज्य के अधीनस्थ सामंतों ने उत्तरी एवं पश्चिमी भारत में शासन का भार सम्भाला। इनके राजवंश का नाम क्षत्रप रखा गया। ईरान की प्रसिद्ध उपाधि 'क्षत्रपावन' (पृथ्वी के रक्षक) का ही क्षत्रप संस्कृत रूप है तथा प्राकृत लेखों में इसे खतप शब्द से उल्लेख किया गया है। इसी कारण सामंतों द्वारा प्रचलित सिक्के 'क्षत्रप-मुद्रा' के नाम से प्रसिद्ध हुए। क्षत्रप सिक्के भारतीय मुद्रा के इतिहास में विशेषता रखते हैं। यों तो प्रायः अभिलेख तथा मुद्रा की सहायता से किसी वंश का इतिहास तैयार किया जाता है, परन्तु क्षत्रप इतिहास अस्सी प्रतिशत सिक्कों पर निर्भर करता है, अर्थात् क्षत्रप युग का अधिकांश इतिहास सिक्कों के आधार पर निर्मित किया गया है।

विकेन्द्री शासन

कुषाणकाल में विकेन्द्रित शासन था। अनेक सामंत (क्षत्रप) उत्तर तथा पश्चिम भारत में राज्य करते रहे। अभिलेखों तथा मुद्राओं के आधार पर उसकी निम्नलिखित शाखाओं का उल्लेख आवश्यक प्रतीत होता है—

१. तक्षशिला—पटिक नामक शासक
२. मथुरा—रंजबुल एवं सोडास
३. वाराणसी—खरपल्लाना
४. मालवा—क्षहरातवंशी नहपान
५. सौराष्ट्र—चष्टन तथा उसके वंशज

चौथे तथा पांचवें भूभाग में कई सदियों तक शक-नरेशों का शासन रहा। उन्होंने अनगिनत चाँदी के सिक्के प्रचलित किए जिनका अध्ययन 'क्षत्रप सिक्कों' के नाम से किया जाएगा।

क्षत्रप पश्चिमोत्तर भारत से आए थे

प्राचीन भारत के इतिहास में पश्चिमोत्तर भारत पर अधिक आक्रमण होता रहा। ईरानी, तदनन्तर सिकन्दर का आक्रमण इतिहास में सर्वप्रसिद्ध है। यूनानी लोगों को भारतीय साहित्य तथा अशोक के लेखों में 'यवन' कहा गया है। ईसा-पूर्व सदियों में यवन शासन काबुल, गान्धार तथा पूर्वी पंजाब (जालंधर) तक फैला था। इन्हीं को पराजित कर शक, तत्पश्चात् यूईची (कुषाण) जाति, ने गान्धार पर अधिकार किया और क्रमशः राज्य का विस्तार किया। विकेन्द्रीय शासन-प्रणाली के कारण कुषाण-नरेशों ने पश्चिमोत्तर भारत में शकों को सामंत के रूप में यत्र-तत्र नियुक्त किया। मालवा तथा काठियावाड़ के शक क्षत्रप के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनके सिक्कों के अध्ययन से प्रकट होता है कि क्षत्रप गान्धार क्षेत्र से आकर पश्चिम भारत में शासन करने लगे। निम्नलिखित प्रमाण उस कथन की पुष्टि करते हैं—

Scanned with CamScanner

१. सिक्कों पर उल्लिखित 'क्षत्रप' शब्द जो ईरानी 'क्षत्रपावन' का संस्कृत रूप था।

२. गान्धार की लिपि खरोष्ठी का प्रयोग। शासन की प्रारम्भिक सदियों में मालवा के क्षत्रप नरेशों ने खरोष्ठी लिपि में ही अपना नाम अंकित कराया है। नहपान के सिक्कों पर वंश नाम क्षहरात शब्द के साथ व्यक्तिगत नाम खरोष्ठी लिपि में है। चष्टन ने भी क्षत्रप के रूप में खरोष्ठी लिपि का प्रयोग किया था। क्रमशः क्षत्रप शासक हिन्दू संस्कृति में लीन हो गए।

भारतीय नाम धारण किया और लेखों को ब्राह्मी में अंकित कराया। क्षत्रपों के लेख प्राकृत भाषा तथा ब्राह्मी में लिखे गए थे।

३. शक सम्वत् में तिथि का उल्लेख।

क्षत्रप सिक्कों पर या लेखों में शक–सम्वत् (शक–नृपकाल) का प्रयोग किया गया है। यद्यपि इस सम्वत् (७८ ई०) का आरम्भ कनिष्क ने किया जो शक नहीं था, किन्तु पश्चिमी भारत में शासन करने वाले शक–नरेशों (क्षत्रप) ने इसी काल को अपनाया। महाक्षत्रप रुद्रदामन (१५० ई०) के पौत्र जीवदामन के शासन से सिक्कों पर तिथियाँ अंकित होने लगी थीं। उसी कारण वह गणना कुषाण सम्वत् अथवा कनिष्क सम्वत् से विख्यात न होकर शक-सम्वत् के नाम से आज तक विदित है। भारत सरकार ने उसे 'राष्ट्रीय सम्वत्' घोषित किया है।

४. सिक्कों पर अंकित चिह्न—चिह्नों के आधार पर क्षत्रपों का सम्बन्ध बौद्धमत से जोड़ा जाता है। वह धर्म गान्धार, मथुरा तथा वाराणसी तक सम्मानित था। चक्र बौद्धों का चिह्न है जिसे गान्धार के सामंत भी आदर देते रहे। पार्थियन सिक्कों की तरह क्षत्रप सिक्कों पर सूर्य–चन्द्र की आकृतियाँ बनी हैं। इसलिए यह अनुमान सही होगा कि पश्चिमी भारत के क्षत्रप गान्धार क्षेत्र से आए थे। उनका मूलतः मालवा या काठियावाड़ से कोई सम्बन्ध नहीं था।

५. सिक्कों की तौल तथा धातु—भारत में चाँदी के सिक्के अत्यन्त प्राचीन युग से निर्मित होते रहे हैं। मौर्ययुग से पहले कार्षापण (चाँदी के) सिक्के प्रचलित थे। भारत में चाँदी की खान न होने पर भी ईरान से चाँदी का आयात होता था। यूनानी नरेशों ने भी चाँदी के द्रम (drachm) प्रचलित किए। उसी रोमन तौल के आधे क्षत्रप सिक्के (३२ या ३५ ग्रेन) मिलते हैं। इसलिए उन्हें 'अर्द्धद्रम' कहा जाता है। यह तौल या धातु भी गान्धार के भूभाग का अनुकरण था।

क्षत्रप के वंशज

पश्चिमी भारत में दो भिन्न वंशों के शासकों ने क्षत्रप–नरेश के नाम से राज्य किया।

१. **क्षहरातवंश**—इसे लेखों में खहरात (कार्ले) तथा खखरात (नासिक लेख) नाम से भी उल्लिखित किया गया है। इस वंश का प्रथम शासक भूमक ईसा–पूर्व काल में मालवा पर अधिकार कर चुका था। वहाँ के आंध्रवंशी राजा सातकर्णि का नाम लेखों में मिलता है जो सम्भवतः मालवा (साँची का भाग) पर शासन कर रहा था (साँची तोरप पर अंकित लेख) और भूमक द्वारा पराजित हुआ था। भूमक के सिक्कों पर 'क्षहरात क्षत्रप' शब्दों को स्पष्ट रूप से पढ़ा गया है। वे सिक्के मालवा, गुजरात तथा काठियावाड़ से मिले हैं। अतएव ईसा–पूर्व काल में क्षहरातवंशी भूमक के शासन की पुष्टि होती है। नहपान इसी का उत्तराधिकारी था जिसके लेख—नासिक, कार्ले जूनार (पूना के समीप) तथा सिक्के (अनगिनत संख्या में) पश्चिमी भारत (महाराष्ट्र) से उपलब्ध हुए हैं। नहपान को सातवाहनवंशी राजा गौतमीपुत्र सातकर्णि ने सन् १२४ ई० के समीप हरा दिया और इस प्रकार क्षहरातवंश का अन्त हो गया। यहाँ इसके

Scanned with CamScanner

जामाता ऋषभदत्त (प्राकृत उषवदत) का नामोल्लेख आवश्यक है। ऋषभदत्त हिन्दू-संस्कृति को अपनाकर पौराणिक रीति से तीर्थस्थानों में दान आदि करने लगा। नासिक लेख में पुष्कर तीर्थ (राजस्थान) पर दान करने का वर्णन है। उसने ब्राह्मणों को आजीविका के लिए ग्राम-दान किया था। अतः सिथियन होकर भारतीय संस्कृति का पालन करना एक विशेष घटना थी।

२. कारदमकवंश—नहपान के पश्चात् (ई० स० १३०) चष्टन का शासन मालवा में आरम्भ हुआ। उसे कारदमक का वंशज कहा जाता है। लेखों में क्षहरात का उल्लेख स्पष्ट है किन्तु कारदमक शब्द चष्टन के उत्तराधिकारी एवं शक्तिशाली नरेश रुद्रदामन के अभिलेख में भी नहीं मिलता। मुद्रा-लेख में चष्टन घसमोटिक का पुत्र कहा गया है जो सिथियन शाखा में उत्पन्न हुआ था। इसके वंशजों ने कालान्तर में भारतीय नाम धारण कर लिया और भारतीय संस्कृति में घुल-मिल गए। आश्चर्य यह है कि चष्टन के वंशज करीब ढाई सौ वर्षों तक लगातार उज्जैन में शासन करते रहे। इनके संयुक्त सिक्कों पर पिता तथा पुत्र का नाम या राजा तथा उसके उत्तराधिकारी का नाम स्पष्ट रूप से पढ़ा गया है। मुद्रा-लेख की ऐसी विचित्रता अन्यत्र नहीं दिखाई पड़ती। उनके सिक्कों पर शक-सम्वत् से सम्बद्ध तिथियाँ भी खुदी हैं जिससे काल-गणना में सरलता होती है। चष्टन परिवार के अंतिम राजा रुद्रसिंह को गुप्त सम्राट् द्वितीय चन्द्रगुप्त ने परास्त कर कारदमकवंश का अन्त किया। चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के उदयगिरि गुहा-लेख तथा सांची वेदिका लेख गुप्त-विजय को प्रमाणित करते हैं।

क्षत्रप तथा महाक्षत्रप

पश्चिमी भारत पर शासन करने वाले शक सामंतों ने, जिन्हें क्षत्रप कहते हैं, अपने प्रचलित सिक्कों पर दो प्रकार की उपाधियों का उपयोग किया है। पहले क्षत्रप शब्द का प्रयोग अधिकतर पाया जाता है। जैसा कहा गया है, यह ईरानी उपाधि क्षत्रपावन (भूमि का स्वामी) का संस्कृत रूप है। प्राकृत में खतप मिलता है। सिक्कों के अध्ययन से पता चलता है कि क्षत्रप साधारण उपाधि थी जो किसी राजा की अधीनता की बोधक थी। इससे ऊँची उपाधि महाक्षत्रप की समझी जाती है और मुद्रा-लेखों में शासक के लिए महाक्षत्रप तथा उसके सहयोगी के लिए क्षत्रप का उल्लेख पाया जाता है। सम्भव है कि शासक का पिता क्षत्रप हो तथा उसके पुत्र ने महाक्षत्रप की उपाधि धारण की हो। सौराष्ट्र के शक राजा रुद्रदामन के मुद्रा-लेख तथा उसकी जूनागढ़ प्रशस्ति में दोनों उपाधियाँ प्रयुक्त हैं—

'राज्ञः क्षत्रपस्य स्वामी जयदाम्नः पुत्रस्य राज्ञो महाक्षत्रपस्य (रुद्रदामन)'। यदि समस्त लेखों का अनुशीलन किया जाए तो ज्ञात होता है कि—

१. क्षत्रप उपाधि अधीनता का द्योतक है।

२. महाक्षत्रप—स्वाधीन होने की दशा में राजा इस उपाधि का उल्लेख करता था।

३. किसी अवस्था में शासक शक्तिशाली होकर महाक्षत्रप होने की घोषणा करता था।

४. कालान्तर में महाक्षत्रप शब्द का प्रयोग समाप्त हो गया।

५. मुद्रा-लेख में प्रधान शासक महाक्षत्रप तथा उसके सहायक को क्षत्रप कहा गया है।

६. राजनीतिक कारणों से शक इतिहास में कुछ समय तक शासक महाक्षत्रप की उपाधि धारण न कर सका।

Scanned with CamScanner

अधीनस्थ सामंत को भी महाक्षत्रप कहा गया था।

इसके स्पष्टीकरण के लिए सिक्कों तथा अभिलेखों का विवेचन आवश्यक होगा। इस बात का उल्लेख असंगत न होगा कि समस्त लेखों के अनुशीलन से प्रतीत होता है कि किसी प्रकार के नियम, क्रम अथवा परम्परा का अनुसरण नहीं किया गया। नहपान के लेख बतलाते हैं कि वह मालवा एवं महाराष्ट्र पर शासन कर रहा था। उसके सिक्के गुजरात, मालवा, महाराष्ट्र में मिले हैं। सिक्कों पर प्राकृत में "रञो क्षहरातस नहपानस" (राजा क्षहरातवंशी नहपान का सिक्का) अंकित है। इसमें क्षत्रप शब्द का प्रयोग नहीं है। लेखों में क्षत्रप तथा महाक्षत्रप दोनों उपाधियाँ उल्लिखित हैं—'राञो क्षहरातस क्षत्रपस नहपानस' (नासिक गुहा–लेख) 'रञो खहरातस खतपस नहपानस' (कार्ले गुहा–लेख) 'राञो महखतपस सामि नहपानस' (जूनार गुहा–लेख)। सम्भव है क्षत्रप की अवस्था में नहपान कुषाणों के अधीन हो। कालान्तर में स्वतंत्र होकर महाक्षत्रप की उपाधि धारण की। मुद्रा–लेख में भारतीय शैली में राजा (प्राकृत रञो) की उपाधि धारण की। किन्तु यह परम्परा आगे नहीं दिखाई देती। इस वंश के पश्चात् कारदमकवंश के समस्त शासकों ने क्षत्रप अथवा महाक्षत्रप उपाधियों के साथ सिक्के अंकित कराए। शकवंश के प्रसिद्ध नरेश रुद्रदामन के पिता की उपाधि क्षत्रप थी और वह स्वयं महाक्षत्रप बन जाने या उपाधि धारण करने की घोषणा करता है—'स्वयमधिगत महाक्षत्रप नाम्ना नरेन्द्र कन्या स्वयंवरानेक माल्य प्राप्त दाम्ना महाक्षत्रपेण रुद्रदाम्ना' (गिरनार का लेख)। इसका अर्थ यह है कि सम्भवत: उसके वंश में किसी ने अपने को महाक्षत्रप घोषित नहीं किया था या स्वतंत्र नहीं हुए थे। किन्तु रुद्रदामन ने अपनी स्वतंत्रता घोषित की। दोनों उपाधियों का राजनीतिक मूल्य एक–सा नहीं था। दूसरी सदी में जीवदामन तथा रुद्रसिंह में गद्दी के लिए युद्ध होता रहा। जीवदामन महाक्षत्रप था। रुद्रसिंह ने उसे सिंहासन से हटा दिया। वह स्वयं महाक्षत्रप हो गया। इस कारण से जीवदामन क्षत्रप हो गया। दूसरी बार रुद्रसिंह हार गया। अत: जीवदामन महाक्षत्रप तथा रुद्रसिंह क्षत्रप की उपाधियों सहित लेखों में उल्लिखित है। इसी तरह तीसरी शताब्दी में क्षत्रप राजाओं को परास्त कर ईश्वरदत्त दो वर्ष के लिए महाक्षत्रप हो गया जिसके सिक्कों पर 'वर्ष प्रथम' तथा 'वर्ष द्वितीय' पढ़ा गया है। ईश्वरदत्त शकवंश का नहीं था, किन्तु शासक हो जाने पर उसने परम्परागत 'महाक्षत्रप' की उपाधि से अपनी स्वतंत्रता की घोषणा की थी।

यों तो पश्चिमी भारत के सिक्कों तथा अभिलेखों में ये उपाधियां मिलती हैं, किन्तु कुषाण नरेश कनिष्क के लेखों में भी इसका उल्लेख है। कनिष्क के सारनाथ प्रतिमा लेख (तिथि ३ = ८१ ई०) के अध्ययन से प्रकट होता है कि महाक्षत्रप स्वतंत्र शासक के लिए प्रयुक्त नहीं है। प्रधान अधीनस्थ शासक को महाक्षत्रप तथा उसके सहायक को क्षत्रप कहा गया है।

'भिक्षु बलस्य त्रैपिटकस्य बोधिसत्वो प्रतिष्ठापितो। महाक्षत्रपेन खरपल्लापनेन सहाक्षत्रपेन वनष्परेन'। जिस समय (८१ ई०) भिक्षु बल ने बोधिसत्व–प्रतिमा स्थापित की, उस समय (कनिष्क के अधीन) महाक्षत्रप खरपल्लान तथा उसके साथ क्षत्रप वनष्पर शासन करते थे। अतएव रुद्रदामन ने जिस रूप में महाक्षत्रप की उपाधि धारण की एवं स्वतंत्र हुआ, उससे भिन्न सारनाथ प्रतिमा लेख में 'महाक्षत्रप' शब्द प्रयुक्त है। अतएव, किसी निश्चित सिद्धान्त का प्रतिपादन करना उचित नहीं होगा।

भाषा तथा लिपि

मौर्य सम्राट् अशोक के लेख पश्चिम तथा दक्षिण भारत में प्राकृत भाषा में लिखे गए थे, जिनकी लिपि ब्राह्मी थी। उसके उत्तराधिकारी सातवाहन नरेशों ने प्राकृत का ही प्रयोग किया। मुद्रा–लेख तथा गुहा–लेख सभी प्राकृत भाषा तथा ब्राह्मी लिपि में उत्कीर्ण हैं। ईसवी पूर्व शताब्दी

Scanned with CamScanner

में दक्षिण भारत में प्राकृत का ही प्रचार था। ईसवी सन् के बाद दक्षिण तथा पश्चिम भारत में शकवंश (क्षत्रप) राजा शासन करने लगे जिनको सातवाहन सम्राटों से युद्ध करना पड़ा। उत्तर-पश्चिम भारत से आने के कारण शक लोगों ने मुद्रा-लेख में खरोष्ठी लिपि का प्रयोग किया था, किन्तु वह स्थिति बदल गई। नहपान के मुद्रा-लेख में ब्राह्मी तथा खरोष्ठी लिपियों में राजा के नाम अंकित हैं। भाषा प्राकृत ही है। दूसरी शताब्दी ई० से शक नरेश भारतीय संस्कृति को अपनाने लगे। अतएव संस्कृत भाषा तथा ब्राह्मी लिपि का प्रयोग आवश्यक हो गया। यह कहना उचित न होगा कि उन लोगों ने पूर्णरूपेण भारतीय भाषा तथा लिपि को अपनाया। मुद्रा-लेख में प्राकृत भाषा का तथा अभिलेख में संस्कृत भाषा का प्रयोग अर्थात् दोनों भाषाओं का प्रयोग मिलता है। महाक्षत्रप रुद्रदामन की मुद्रा पर प्राकृत में लेख है तो गिरनार पर्वत के समीप जूनागढ़ का लेख काव्यमय संस्कृत में है। उनके पुत्र तथा पौत्र के मुद्रा-लेख मिश्रित भाषा में हैं। 'महाक्षत्रपस रुद्रदाम्न पुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रसिंहस'।

प्राकृत तथा संस्कृत मिश्रित

पुत्तस	पुत्रस्य
राजो	राज्ञो
रुद्रसिंहस	रुद्रसिंहस्य

इन शब्दों के अध्ययन से स्पष्ट प्रकट होता है कि सातवाहन युग से क्षत्रप काल में संस्कृत का प्रयोग बढ़ने लगा। सातवाहन ने ब्राह्मण होकर भी प्राकृत में लेख खुदवाए, किन्तु शक नरेश ने विदेशी होकर (भारतीय संस्कृति से प्रभावित होकर) भी संस्कृत का प्रयोग आरम्भ किया।

प्राकृत—सातवाहन लेख	मिश्रित—क्षत्रप लेख
सामि	स्वामी
पुतस	पुत्रस या पुत्रस्य
राजो	राज्ञो
ष्णाष	स्नुषा या स्वाश्रीय
वासे	वर्षे
सिंहस	सिंहस्य

कहने का तात्पर्य यह है कि प्राकृत तथा खरोष्ठी लिपि को त्यागकर क्षत्रप नरेशों ने पहले मिश्रित (संस्कृत + प्राकृत) तथा कालान्तर में संस्कृत भाषा तथा ब्राह्मी लिपि को ही अपनाया।

क्षहरातवंश के सिक्के

१. भूमक क्षहरातवंश का प्रथम शासक था जिसने ईसवी सन् के आरम्भ में मालवा में शासन किया था। उसके ताँबे के सिक्के गुजरात, मालवा तथा काठियावाड़ में मिले हैं। अग्रभाग—बाण तथा वज्र, खरोष्ठी लिपि में मुद्रा-लेख, 'क्षहरदस (क्षत्रप)'। पृष्ठभाग—धर्म।

२. भूमक का उत्तराधिकारी नहपान था। इसके लेख नासिक, कार्ले तथा जूनार गुहा में खुदे हैं। लेखों में (शक-सम्वत्) तिथि ४२, ४६ का उल्लेख है। अतएव यह द्वितीय शताब्दी के पूर्वार्द्ध (४६ + ७८ = १२४ ई०) में शासन करता था। मालवा से महाराष्ट्र तक इसका राज्य फैला था। नासिक के समीप योगलथम्बी नामक स्थान से चाँदी के हजारों सिक्कों का एक ढेर मिला है।

Scanned with CamScanner

उसमें दो प्रकार के सिक्के विद्यमान हैं। पहले प्रकार के सिक्कों को नहपान ने स्वयं प्रचलित किया था। नासिक गुहा-लेख से ज्ञात होता है कि सिक्कों को काहापण (संस्कृत कार्षापण) के नाम से पुकारते थे। उसके जामाता, ऋषभदत्त ने हिन्दू संस्कृति को अपनाया। अत: सहस्त्रों कार्षापण दान में दिए। नासिक गुहा-लेख में श्रेणी नामक संस्था के बैंक में ३००० काहापण सुरक्षित रखने का वर्णन है, जिसके सूद से ऋषभदत्त ने संघ में व्यय का प्रबंध किया था। नहपान ने अनगिनत सिक्के प्रचलित किए थे। कुछ सिक्कों के अग्रभाग पर वृद्ध व्यक्ति की आकृति दिखाई देती है। इससे प्रकट होता है कि नहपान ने अधिक समय तक राज्य किया था। अंतिम समय में वह सातवाहन नरेश गौतमीपुत्र सातकर्णि से पराजित हुआ। सातकर्णि ने नहपान के सिक्कों पर विजयोपरान्त अपना नाम अंकित कराया। योगलथम्बी ढेर में ऐसे कई हजार कार्षापण हैं, जिनसे सातवाहन नरेश द्वारा सिक्कों के पुन: मुद्रण का पता चलता है।

प्रथम प्रकार = नहपान के सिक्के पर क्षत्रप उपाधि का अभाव।

अग्रभाग—राजा के अर्द्ध शरीर की आकृति, सिर पर टोपी, मूंछ सहित।

पृष्ठभाग—बाण तथा वज्र, ब्राह्मी लिपि में बारह बजे लेख—'राजो क्षहरातस नहपानस'। उसके विपरीत ग्यारह बजे से खरोष्ठी लिपि में मुद्रा-लेख दाहिने से बाएं 'राजो चहरतस नहपनस'।

सातवाहन गौतमीपुत्र सातकर्णि द्वारा दूसरे प्रकार के पुन: मुद्रित सिक्के।

अग्रभाग—चैत्य तथा लेख, 'गोतमीपुतस सिरि सातकणिस' (इसमें नहपान का सिर दिखलाई पड़ रहा है) यानी सिर पर लेख अंकित।

पृष्ठभाग—वज्र की आकृति पर उज्जैनी चिह्न अंकित। नहपान के नाम के कुछ अक्षर पढ़े जा सकते हैं (ब्राह्मी तथा खरोष्ठी लिपियों में)।

कारदमकवंश के सिक्के

कारदमकवंश के शक लोगों ने उज्जैन में शासन आरम्भ किया। ये भी कुषाणों के सामंत के रूप में पश्चिमी भारत में आए, किन्तु कालान्तर में स्वतंत्र हो गए। इनके सिक्कों की एक विशेषता है कि अधिकतर पिता का नाम भी मुद्रा-लेख में उल्लिखित है। इनका शासन संयुक्त रूप में संचालित हुआ था। यदि पिता शासक है (जिसकी उपाधि प्राय: महाक्षत्रप थी) तो उसके शासन में सहयोगी पुत्र का भी नामोल्लेख है तथा वह क्षत्रप कहा गया है। किसी परिस्थिति में पुत्र न रहकर छोटा भाई या बहन का पुत्र भी सहायक के रूप में दिखलाया गया है। (यह उसकी क्षत्रप उपाधि से ज्ञात होता है।)

कारदमक का पहला शासक चष्टन था। उसे घसमोटिक का पुत्र कहा गया है। चष्टन पश्चिमोत्तर भारत से आया था, इसीलिए उसने प्राकृत भाषा तथा खरोष्ठी लिपि को अपनाया था। क्रमश: खरोष्ठी लिपि का प्रयोग बंद हो गया तथा प्राकृत में संस्कृत मिश्रित भाषा प्रयोग में आने लगी। ऐसा प्रतीत होता है कि कारदमकवंश का राज्य चौथी सदी के अंत तक पश्चिमी भारत में था; तत्पश्चात् गुप्त सम्राट् द्वितीय चन्द्रगुप्त ने शकों को परास्त कर सभी प्रदेशों को अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया।

दूसरी सदी के मध्य में सातवाहन नरेशों को जीतकर चष्टन के उत्तराधिकारी रुद्रदामन ने अपने राजों की प्रतिष्ठा को पुन: स्थापित किया। यह ज्ञात नहीं कि क्षहरात तथा कारदमक के परिवारों का क्या सम्बन्ध थे, किन्तु दोनों शक जाति के थे। दक्षिणापथपति पुलमावि के पराजित होने पर रुद्रदामन का राज्य मालवा, काठियावाड़ तथा गुजरात में फैल गया। जहाँ उसके लेख तथा सिक्के

Scanned with CamScanner

मिले हैं। गिरनार पर्वत पर खुदे लेख से प्रकट होता है कि रुद्रदामन शक ७२ अर्थात् १५० ई० (७२ + ७८) में शासन कर रहा था। अतएव चष्टन १३० ई० के समीप मालवा का शासक रहा होगा। डॉ० भण्डारकर ने अंडौ लेख के आधार पर चष्टन तथा रुद्रदामन को संयुक्त शासक माना है, क्योंकि दोनों उस लेख में राजा (राज्ञो) कहे गए हैं—

'राज्ञो चष्टनस घसमोटिक पुत्रस राज्ञो रुद्रदाम जयदाम पुत्रस'। भण्डारकर का मत समीचीन नहीं है। इसे स्वीकार करने में यह कठिनाई है कि रुद्रदामन ने जूनागढ़ लेख में व्यक्त किया है—'स्वयमधिगत महाक्षत्रप नाम्ना' अर्थात् जयदामन के पश्चात् वह शासक हुआ और उसने अपने को महाक्षत्रप घोषित किया। सम्भव है, चष्टन के बाद किसी शत्रु ने अधिकार कर लिया हो। रुद्रदामन ने उसे हटाकर स्वयं अपना प्रभुत्व स्थापित किया था। चष्टन के मुद्रा-लेख में महाक्षत्रप चष्टन के साथ रुद्रदामन क्षत्रप नहीं कहा गया है। चष्टन ने क्षत्रप तथा महाक्षत्रप के रूप में सिक्के प्रचलित किए। उसने आंध्र सिक्कों पर खुदे चैत्य के आकार को अपनाया। किन्तु, खरोष्ठी लिपि का प्रयोग समाप्त हो गया।

१. **चाँदी के चष्टन के सिक्के—क्षत्रप के रूप में—**

अग्रभाग—राजा के अर्द्ध शरीर की आकृति।

पृष्ठभाग—चैत्य, चाँद और तारे। ग्यारह बजे ब्राह्मी लिपि में लेख 'राजनो क्षत्रपस घसमोटिक पुत्रस'।

२. **महाक्षत्रप के रूप में अग्रभाग—वही।**

पृष्ठभाग—ब्राह्मी लिपि में लेख, 'राज्ञो महाक्षत्रपस घसमोटिक पुत्रस चष्टन'। किसी मुद्रा में खरोष्ठी लिपि में भी नाम अंकित मिला है।

ताँबे के सिक्के

अग्रभाग—खड़ा अश्व, यूनानी अक्षर अस्पष्ट। पृष्ठभाग—चैत्य, चाँद, तारे। ब्राह्मी लिपि में लेख अस्पष्ट।

'चष्टन का जयदामन उत्तराधिकारी था जिसका पुत्र महाक्षत्रप रुद्रदामन अत्यन्त पराक्रमी शासक हुआ। उसका पिता जयदामन महाक्षत्रप के रूप में सिक्का प्रचलित न कर सका जिससे अनुमान लगाया जा सकता है कि बाहरी शत्रु ने उसे गद्दी से हटा दिया। सम्भवतः यही कारण था कि रुद्रदामन स्वयं महाक्षत्रप होने का दावा करता है।

क्षत्रप जयदामन के ताँबे के सिक्के—

अग्रभाग—वृषभ या हस्ती की आकृति, त्रिशूल तथा कठोर।

पृष्ठभाग—छः मेहराव का चैत्य। ब्राह्मी लिपि में लेख 'राज्ञो क्षत्रपस स्वामी जयदामनस'।

रुद्रदामन के सिक्के

(सिक्कों पर तिथि का अभाव)

अग्रभाग—राजा का अर्द्धचित्र, यूनानी अक्षरों में अर्थरहित लेख।

पृष्ठभाग—तीन चाप का चैत्य, नीचे वक्र रेखा, बिन्दु, तारे तथा अर्द्धचन्द्र, बारह बजे, ब्राह्मी लिपि में लेख—'राज्ञो क्षत्रपस जयदाम पुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रदामस।'

Scanned with CamScanner

महाक्षत्रपस रुद्रदामन के पुत्र एवं उत्तराधिकारी दामजद श्री ने द्वितीय शती के अंत (१... ई०) में राज्य सम्भाला। मुद्रा-लेखों में उसका नाम तीन रूपों में उल्लिखित है।

(क) दामघसद (ख) दामजद श्री (क्षत्रप उपाधि सहित) (ग) दामजद (महाक्षत्रप के ... में)। जद शब्द ईरानी है, जिसका अर्थ है पुत्र। अतः अन्य भाषा के शब्द को यथार्थस्वरूप दे... कठिन था। इसने अपने मुद्रा-लेख में संस्कृत मिश्रित प्राकृत का प्रयोग किया। 'राज्ञो तथा पुत्रस... विशेष उल्लेखनीय हैं।

महाक्षत्रप दामजद श्री के सिक्के—

अग्रभाग—राजा के अर्द्ध शरीर की आकृति।

पृष्ठभाग—चैत्य, ब्राह्मी में लेख—'राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रदाम्न पुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस दामजद श्री'।

सिंहासन के निमित्त संघर्ष

दामजद श्री के पश्चात् दो व्यक्ति अपने को गद्दी का अधिकारी घोषित करने लगे। (१) दामजद श्री का पुत्र जीवदामन (२) दामजद श्री का भ्राता रुद्रसिंह प्रथम। दोनों व्यक्तियों में संघर्ष की जानकारी उनके सिक्कों के अध्ययन से होती है। चूँकि इसी जीवदामन के समय से चाँदी के सिक्कों पर ब्राह्मी लिपि में अंक खोदे गए, अतः उनके आधार पर विदित होता है कि जयदामन ने दो बार महाक्षत्रप के रूप में सिक्के प्रचलित किए। उसी प्रकार प्रथम रुद्रसिंह (गद्दी का दूसरा अधिकारी) भी दो विभिन्न तिथियों पर महाक्षत्रप कहा गया है और मुद्रा-लेख में महाक्षत्रप की उपाधि सहित उल्लिखित है। इनकी तिथियों का उल्लेख शक-सम्वत् में किया जाएगा।

जीवदामन ने महाक्षत्रप के रूप में १०० वर्ष (= १७८ ई०) तथा ११९ वर्ष में सिक्के प्रचलित किए। इनमें क्षत्रप की उपाधि नहीं मिलती। सिक्कों के परीक्षण से दोनों सिक्कों पर खुदी आकृति में अन्तर है। प्रथम रुद्रसिंह की तिथियाँ (शक-काल) निम्न प्रकार हैं—

१०२ में क्षत्रप के रूप में सिक्के

१०३ में क्षत्रप उपाधि सहित नाम (गुंडा लेख में)

१०३-११० महाक्षत्रप के रूप में सिक्के

११०-११२ क्षत्रप के रूप में

११३-११९ महाक्षत्रप के रूप में—इन तिथियों के विवेचन से प्रकट होता है कि ११०-११२ के दौरान जीवदामन की स्थिति नगण्य थी। प्रथम रुद्रसिंह क्षत्रप था। महाक्षत्रप कौन था? यह विचारणीय प्रश्न है। दोनों व्यक्तियों (जीवदामन तथा रुद्रसिंह) में किसी के भी सिक्के महाक्षत्रप के रूप में नहीं मिलते। अतएव डॉ० भण्डारकर एक तीसरे व्यक्ति को इन दो वर्षों में महाक्षत्रप मानते हैं। (ईश्वरदत्त—जिसका वर्णन किया जाएगा) डॉ० भण्डारकर के कथनानुसार ईश्वरदत्त दो वर्षों तक महाक्षत्रप रहा जिसके सिक्के भी सौभाग्यवश मिलते हैं। एक पर 'वर्षे प्रथम' तथा दूसरे पर 'वर्षे द्वितीय' अंकित है। उनका कहना है कि इस संघर्ष में ईश्वरदत्त के अतिरिक्त सातवाहन नरेश यज्ञश्री सातकर्णि ने लाभ उठाया। क्षत्रपों से पश्चिमी प्रदेश जीत लिया। इन्हीं क्षत्रपों के अनुकरण पर यज्ञश्री ने चाँदी के सिक्के (सोपारा शैली) भी प्रचलित किए। उस घरेलू युद्ध में ई० स० १७८ के पश्चात् रुद्रसिंह शासक बन बैठा एवं सिक्के प्रचलित किए। ११०-११२ (११८ ई०-१९० ई०) के मध्य ईश्वरदत्त गद्दी पर आया। किन्तु वह अधिक समय तक शक्तिशाली न रह सका। प्रथम

Scanned with CamScanner

रुद्रसिंह ने उसे परास्त कर पुनः ११३–११९ के दौरान महाक्षत्रप हो गया। सम्भवतः जीवदामन ने शक्ति एकत्रित कर अपने चाचा को हरा दिया जैसाकि उसकी महाक्षत्रप उपाधि से ज्ञात होता है।

उत्तरी काठियावाड़ में जसधन तालाब के किनारे स्थित स्तम्भ पर एक लेख खुदा है जिसकी तिथि १२७ (शक–सम्वत्) अर्थात् ई० स० २०५ ज्ञात है। उसमें निम्न प्रकार से वंशावली दी गई है। उसके आधार पर प्रथम रुद्रसिंह रुद्रदामन का पुत्र प्रकट होता है—

राज्ञो	महाभद्रमुख स्वामी	चष्टन
”	”	जयदामन
”	”	रुद्रदामन
”	”	रुद्रसिंह
”	”	रुद्रसेन

रुद्रदामन के सिक्के

सम्भव है रुद्रसिंह महाक्षत्रप रुद्रदामन का प्रथम पुत्र हो। अतएव वह अपने को सिंहासन का अधिकारी मानने लगा। नाम लिखने की परिपाटी के कारण जीवदामन को रुद्रदामन का उत्तराधिकारी कहा जा सकता है। सिक्कों पर रुद्रदाम्नः तथा जीवदाम्नः अंकित हैं। 'राज्ञो महा–क्षत्रपस पुत्रस्य महाक्षत्रप जीवदाम्नः'। अतः जीवदामन का शासन प्रथम रुद्रसिंह से पहले माना जा सकता है। जीवदामन के ११९ वर्ष के सिक्कों (महाक्षत्रप में) पर मूंछें दीख पड़ती हैं, परन्तु १०० (= १७८ ई०) वर्ष वाले सिक्कों पर नहीं हैं। शकवंश में प्रथम रुद्रसिंह के सिक्कों पर ही सर्वप्रथम मूंछें दिखाई देती हैं, अर्थात् मूंछ की शैली रुद्रसिंह से आरम्भ हुई। इसलिए ११९ वर्ष वाले जीवदामन के सिक्के (महाक्षत्रप तथा मूंछ सहित) प्रथम रुद्रसिंह के बाद प्रचलित हुए थे।

दोनों व्यक्तियों ने सिक्कों के लिए चाँदी तथा पोटीन का प्रयोग किया। पोटीन के सिक्कों पर पिता के नाम नहीं मिलते। 'राज्ञो महाक्षत्रपस जीवदामस तथा राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रसिंहस।'

तात्पर्य यह है कि जीवदामन तथा रुद्रसिंह समकालीन थे। दोनों में संघर्ष की घटनाओं की पुष्टि होती है।

सत्यदामन

दामदजश्री का पुत्र सत्यदामन अपने भ्राता जीवदामन के महाक्षत्रप काल (१२० शक) में क्षत्रप रहा, ऐसी धारणा उसके मुद्रा–लेख से हो जाती है। सम्भव है, वह पिता के समय क्षत्रप रहा क्योंकि उसके लेख संस्कृत मिश्रित हैं। यह प्रणाली दामजदश्री के समय में आरम्भ हो गई थी। लेख निम्न प्रकार हैं—'राज्ञो महाक्षत्रपस्य दामदजश्रीय पुत्रस्य राज्ञो क्षत्रपस्य सत्यदाम्न।'

इसके पश्चात् रुद्रसिंह प्रथम के पुत्र रुद्रसेन संघ दामन तथा दामसेन ने पृथक्–पृथक् सिक्के तैयार किए। प्रायः चाँदी तथा पोटीन का प्रयोग किया गया। उनकी मुद्राएँ कम संख्या में उपलब्ध हुई हैं। पोटीन सिक्कों के प्रचलन से प्रकट होता है कि मालवा का भूभाग क्षत्रपों के हाथ में रहा।

दामदजश्री द्वितीय रुद्रसेन प्रथम का पुत्र था जिसके सिक्कों पर शक १५४ (= २३२ ई०) की तिथि उल्लिखित है। उन दिनों दामसेन महाक्षत्रप था। भगवानलाल इन्द्रजी इन दिनों ईश्वरदत्त का शासन सिद्ध करते हैं। दामसेन तथा विजयसेन के बीच ईश्वरदत्त की स्थिति बतलाते हैं तथा आभीर राजा ईश्वरसेन से उसकी तुलना करते हैं। पुराणों का ईश्वरसेन तथा नासिक लेख (९वें वर्ष)

Scanned with CamScanner

आभीर राजा ईश्वरसेन एक ही व्यक्ति था जिसका सिक्का भी उपलब्ध हुआ है। इस प्रश्न पर विचार किया गया है। क्षत्रप वंशावली में ईश्वरदत्त की स्थिति का प्रश्न विवादास्पद है। जिस अवधि (१७१–७६) में भगवान् लालजी ईश्वरदत्त को रखते हैं। उस समय का दामदजश्री तृतीय का सिक्का महाक्षत्रप के रूप में मिल गया है। अतएव ईश्वरसेन (= ईश्वरदत्त) की तिथि निर्धारित नहीं की जा सकती। इसके पुत्र वीरदामन के सिक्कों पर, १५६ तथा १६० पढ़े गए हैं। उसके पश्चात् वीरदामन के पुत्र यशोदामन ने महाक्षत्रप के रूप में सिक्के निकाले, परन्तु शीघ्र ही उसका भ्राता विजयसेन, शककाल १६२ में महाक्षत्रप बन बैठा। सम्भवतः यह वीरदामन तथा यशोदामन के अधीन क्षत्रप रहा है, किन्तु १६३ के पश्चात् महाक्षत्रप के रूप में शासन करने लगा। विजयसेन के अनगिनत सिक्के काठियावाड़ तथा गुजरात से उपलब्ध हुए हैं। इसी के समय से चाँदी के सिक्कों में विकृति आने लगी। इस प्रकार पिता, पुत्र अथवा चाचा क्षत्रप शासक होते रहे तथा सभी ने सिक्के प्रचलित किए। उनकी कोई ऐसी विशेषता नहीं थी, जिसका उल्लेख किया जाए। विश्वसेन के पश्चात् चष्टनवंश की समाप्ति हो गई और कालान्तर में शासन करने वाले क्षत्रप नरेशों ने राजा तथा स्वामी की भी उपाधि धारण की।

रुद्रसिंह द्वितीय

नए वंश के प्रथम शासक रुद्रसिंह द्वितीय शककाल २२७ (= ३०५ ई०) में गद्दी पर बैठा। उसके चाँदी के सिक्कों पर निम्नलिखित लेख अंकित है—'स्वामी जीवदामन पुत्रस राज्ञो क्षत्रपस रुद्रसिंहस'। रुद्रसिंह के पुत्र द्वितीय यशोदामन के सिक्के महाक्षत्रप उपाधि सहित नहीं मिले हैं। सम्भव है, किसी बाहरी शत्रु ने आक्रमण किया हो। इस वंश के तीसरे शासक ने लम्बी उपाधि धारण की। 'राज्ञा महाक्षत्रपस स्वामी रुद्रदाम पुत्रस राज्ञा महाक्षत्रपस स्वामी रुद्रसेनस'। रुद्रसेन तृतीय के शासनकाल में सिक्कों के लिए चाँदी के अतिरिक्त सीसे का भी प्रयोग हुआ। सबसे विशेष बात यह है कि इसी समय (शक ३००) से मुद्रा–लेख इतने हीनावस्था में दिखाई पड़ते हैं कि अक्षरों को स्पष्टतया नहीं पढ़ा जा सकता है। यदि सिक्कों का परीक्षण किया जाए तो उन्हें दो वर्गों में बांट सकते हैं—

२७०–७३ के मध्य सिक्कों पर अक्षरों का अभाव।

दूसरे वर्ग के सिक्कों पर तिथि का स्पष्ट उल्लेख है। अक्षर भी साफ हैं। इसलिए अनुमान लगाया जा सकता है कि नए वंश के शासनकाल में नवीन टकसाल में सिक्के तैयार किए गए हों।

स्वामी रुद्रसेन तृतीय के पश्चात् स्वामी सिंहसेन (बहन का पुत्र) ने राज्य किया। इसके उत्तराधिकारी महाक्षत्रप के रूप में सिक्के प्रचलित रहे। स्वामी सिंहसेन के सिक्के पर राजा तथा महाराजा 'क्षत्रप' की उपाधियों सहित उल्लिखित हैं। उसी समय से सिक्कों पर तिथि के साथ संस्कृत शब्द 'वर्षे' का प्रयोग मिलता है जिसे गुप्तवंशीय चाँदी के सिक्कों पर स्थान दिया गया। इस नए क्षत्रपवंश का अंतिम राजा रुद्रसिंह तृतीय ई० स० ३८८ में राज्य करता रहा। उसके पश्चात् गुप्त सम्राट् चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने काठियावाड़ एवं गुजरात को जीत लिया। इस प्रकार क्षत्रपवंश का अंत हो गया।

क्षत्रप सिक्कों के ढेर

जोगलथम्बी नासिक के समीप चौदह हजार सिक्के मिले। उनमें दस हजार सिक्के पुनः मुद्रित हैं तथा चार हजार नहपान के मूल सिक्के हैं।

Scanned with CamScanner

२. काठियावाड़ ढेर—जूनागढ़ के उपरकोट से बारह सौ सिक्के उपलब्ध हुए जिनमें शककाल २०३ (= ई० स० २८१) के पश्चात् निर्मित सिक्के मिले हैं। इसमें अनेक सिक्के टकसाल में पूरी तरह से नहीं ढाले गए हैं। सम्भव है आक्रमण के समय उसे पृथ्वी में छिपा दिया गया हो। अशान्ति एवं अरक्षा के कारण सिक्के तैयार न हो सके।

३. सर्वानिया ढेर—राजपूताना के बांसवाड़ा रियासत के सर्वानिया स्थान से तीन हजार सिक्कों का ढेर मिला था। इसमें रुद्रसिंह प्रथम से रुद्रसेन तृतीय तक के सिक्के हैं।

Scanned with CamScanner